International Research Journal of Humanities, Language and Literature
ISSN: (2394-1642)
Impact Factor 7.972 Volume 11, Issue 12, Dec 2024
Association of Academic Researchers and Faculties (AARF)
Website-www.aarf.asia, Email : editor@aarf.asia , editoraarf@gmail.com

गणेश शंकर विद्यार्थी की पत्रकारिता एवं स्वाधीनता आंदोलन में उसका योगदान

प्रिया रानी
शोधार्थी हिंदी विभाग,
मगध विश्वविद्यालय बोध गया, बिहार

शोध निर्देशिका -डॉ. साधना कुमारी

शोध सार

गणेश शंकर विद्यार्थी एक भारतीय पत्रकार, स्वतंत्रता सेनानी और भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के नेता थे। उन्होंने पत्रकारिता और स्वाधीनता आंदोलन में कई तरह से योगदान दिया। उन्होंने 1913 में कानपुर से हिंदी साप्ताहिक समाचार पत्र 'प्रताप' की स्थापना की। यह पत्र भारतीय राज्यों के किसानों, श्रमिकों और लोगों की आवाज बना। 'प्रताप' के पहले ही अंक में उन्होंने 'प्रताप की नीति' नामक लेख में राष्ट्रीय पत्रकारिता की अवधारणा प्रस्तुत की। वे अंग्रेजों के खिलाफ लिखने के कारण पांच बार जेल भी गए। उन्होंने सत्याग्रह आंदोलन में भी हिस्सा लिया तथा विक्टर ह्यूगो के उपन्यास 'नाइनटी-थ्री' का हिंदी में अनुवाद किया। उन्होंने कानपुर में लगभग 25 हजार मजदूरों के संगठन 'मजदूर सभा' का नेतृत्व किया। उन्होंने 'मजदूर' पत्रिका के प्रकाशन में भी सहयोग किया। वे होमरूल आंदोलन, असहयोग आंदोलन और सविनय अवज्ञा आंदोलन से भी जुड़े, उन्हें प्रांतीय कांग्रेस कमेटी का अध्यक्ष चुना गया था। भारत के स्वाधीनता संग्राम में योगदान देने वाले नेताओं के साथ लाखों सक्रिय कार्यकर्ताओं ने भी योगदान दिया था। कुछ का योगदान छोटा तो कुछ लोगों का योगदान बड़ा रहा। इनके बीच में एक बड़ी शख्सियत का भी योगदान था जिन्होंने हमेशा कार्यकर्ता के तौर पर अपनी भूमिका चुनी और राजनीतिज्ञ होने के बाद भी लेखन और पत्रकारिता का भी धर्म निभाया लेकिन देश सेवा के लिए कर्तव्य से कभी मुंह नहीं मोड़ा। गणेश शंकर विद्यार्थी ऐसा ही एक नाम है जिन्होंने अपने मानवीय कर्तव्यों का निर्वाहन करते हुए अपनी जान देने से भी नहीं हिचकिचाए।

गणेश शंकर विद्यार्थी का जन्म 26 अक्टूबर, 1890 को उत्तर प्रदेश के फतेहपुर जिले के हाथगांव के कायस्थ परिवार में इनके नाना के यहाँ हुआ था। उनके पिता मुंशी जयनारायण एक स्कूल में हेडमास्टर थे। शुरुआत में उर्दू और फिर अंग्रेजी मिडिल क्लास पास कर इलाहबाद के कायस्थ पाठशाला कॉलेज में उन्होंने आगे की पढ़ाई की। उन्हें गरीबी की वजह से नौकरी करनी पड़ी और अध्यापन कार्य भी किया, पर वे आगे

© Association of Academic Researchers and Faculties (AARF)
A Monthly Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International e-Journal - Included in the International Serial Directories.

की पढ़ाई नहीं कर सके थे। पढ़ाई छूटने के बाद भी उनका लेखन का शौक नहीं छूटा था और 16 साल की उम्र में ही उन्होंने अपनी पहली किताब लिखी थी। 19 साल की उम्र में उनका विवाह प्रकाशवती से हो गया था। गणेश शंकर की प्रमुख रुचि पत्रकारिता एवं सार्वजनिक जीवन में थी। राष्ट्रवादी आंदोलन से वे बहुत प्रभावित हुए और हिंदी में कर्मयोगी, उर्दू में स्वराज्य और 'हितवार्ता' में लेख लिखने लगे। अपनी सरलता और किसी महत्वाकांक्षा के न होने की वजह से उन्होंने स्वयं के विद्यार्थी उपनाम का चयन किया। जल्दी ही उन पर हिंदी पत्रकारिता के सशक्त हस्ताक्षर पं. महावीर प्रसाद द्विवेदी का ध्यान गया, जिन्होंने उन्हें अपनी मासिक पत्रिका 'सरस्वती' में उपसंपादक का पद देने का प्रस्ताव दिया। गणेश शंकर विद्यार्थी की रुचि पत्रकारिता और सार्वजनिक जीवन में ही रही। खुद की पत्रिका से प्रसिद्धि मिली। गणेश शंकर उस समय राजनीति और समसामयिक विषयों में ज्यादा रुचि रखते थे। इसलिए उन्होंने जल्दी ही हिंदी साप्ताहिक 'अभ्युदय' से खुद को जोड़ लिया जो कि उस समय की राजनैतिक पत्र था। इसके बाद 1913 में विद्यार्थी ने कानपुर से 'प्रताप' नाम का हिंदी साप्ताहिक निकाला। जिससे उन्हें खासी पहचान भी मिली। इसी दौरान वे कई प्रसिद्ध लोगों के भी संपर्क में आए।

पहले उनकी मुलाकात बाल गंगाधर तिलक से हुई और उन्हें वे गुरुतुल्य मानने लगे। लेकिन गांधी जी से मिलने के बाद वे उनके अनन्य भक्त हो गए। एनी बेसेंट के होमरूल आंदोलन में हिस्सा लिया और कानपुर में मजदूरों के नेता भी रहे। इतना ही नहीं वे चंद्रशेखर आजाद और भगत सिंह से भी जुड़े रहे थे। लेकिन उन्होंने कभी भी खुद को अग्रिम पंक्ति के नेता के रूप में पहचान बनाने का प्रयास नहीं किया। गणेश शंकर विद्यार्थी ने दंगाइयों लोगों की जान बचाने के लिए खुद की परवाह तक नहीं की। एक कांग्रेस कार्यकर्ता के रूप में भी विद्यार्थी ने बढ़-चढ़कर योगदान दिया और कुछ समय में वे उत्तर प्रदेश यानी उस समय के संयुक्त प्रांत के शीर्ष कांग्रेस नेता हो गए। अपने पत्र 'प्रताप' में अंग्रेजों के खिलाफ लिखने के कारण वे पांच बार जेल भी गए। सत्याग्रह आंदोलन में भी उन्होंने संयुक्त प्रांत के ओर से प्रमुख रूप से भागीदारी निभाई। 25 मार्च, 1931 को गणेश शंकर विद्यार्थी कराची के कांग्रेस के सम्मेलन में जाने की तैयारी कर रहे थे। लेकिन तभी उन्हें खबर मिली की शहर में सांप्रदायिक दंगे भड़क गए हैं और लोगों की जान बचाने के लिए फौरन ही घर से निकल पड़े। भीड़ के सामने पहुंचकर पीड़ितों को बचाने के साथ दंगाइयों को भी समझाने की कोशिश रहे थे। उन्होंने हिंदू-मुस्लिम दोनों संप्रदाय के लोगों की जान बचाई। इस प्रयास में दंगाइयों ने उन्हें निर्ममता से मार दिया। बाद में कानपुर में ही लाशों के ढेर के साथ उनका शव मिला। गांधी जी ने उनकी मौत पर कहा था कि काश ऐसी मौत उन्हें नसीब होती।

बीज शब्द

पत्रकार, स्वतंत्रता सेनानी, पत्रकारिता, स्वाधीनता आंदोलन, किसानों, श्रमिक, मजदूर, होमरूल आंदोलन, मानवीय कर्तव्य, निर्वाहन, स्वर्णिम काल, पितामह, बैर, विरोध, अशांति, असंतोष, गतिशील, राष्ट्रीय व्यक्तित्व, शुमार, वैचारिक अग्निदीक्षा।

© Association of Academic Researchers and Faculties (AARF)
A Monthly Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International e-Journal - Included in the International Serial Directories.

मूल आलेख

गणेश शंकर विद्यार्थी का समय हिंदी पत्रकारिता का स्वर्णिम काल माना जाता है। हिंदी पत्रकारिता के पितामह गणेश शंकर विद्यार्थी के बताए या दिखाए रास्ते पर चलकर ही पत्रकारों ने देश और समाज की सेवा की अलख जगाई है। 'प्रताप' के पहले ही अंक में उन्होंने 'प्रताप की नीति' नामक लेख में राष्ट्रीय पत्रकारिता की अवधारणा प्रस्तुत की, जिसे आज भी आदर्श पत्रकारिता के घोषणा पत्र के रूप में याद किया जाता है। 'संवाद पथ' के जुलाई-सितंबर, 2019 के अंक में प्रकाशित 'हिंदी के तेजस्वी पत्रकार-गणेश शंकर विद्यार्थी' संपादकीय में प्रो. नन्द किशोर पाण्डेय लिखते हैं, "गणेश शंकर विद्यार्थी को हिंदी पत्रकारिता के क्षेत्र में अपनी तेजस्विता, रचनात्मक लेखन, जागरूकता, कष्ट, सहिष्णुता, अनेक बार के कारावास जीवन तथा हिंदू-मुस्लिम एकता के लिए कानपुर का दंगा रोकने के प्रयास में मारे जाने वाले पत्रकार के रूप में जाना जाता है।"[1]

गणेश शंकर विद्यार्थी का जन्म 26 अक्टूबर, 1890 को उनकी ननिहाल इलाहाबाद में शिक्षक जयनारायण श्रीवास्तव के घर जन्मे हिंदी पत्रकारिता के पुरोधा विद्यार्थी जी बीसवीं सदी 1890-1931 के चुनिंदा गतिशील राष्ट्रीय व्यक्तित्वों में शुमार होते हैं। हिंदी राष्ट्रीय पत्रकारिता के भगीरथ विद्यार्थी जी की वैचारिक अग्निदीक्षा लोकमान्य तिलक के विचार-लोक में हुई तो शब्द एवं भाषा के संस्कार उन्होंने आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी जी के सानिध्य में प्राप्त किए। हिंदी पत्रकारिता के पितामह गणेश शंकर विद्यार्थी जी का पत्रकारिता के सफर का श्रीगणेश इलाहाबाद से हुआ। 'स्वराज' अखबार से उर्दू में लिखना शुरू किया, इसी बीच पंडित सुंदरलाल के सानिध्य में वह हिंदी की ओर आकर्षित हुए। एक जर्नलिस्ट के संग-संग लेखक के रूप में उनकी विधिवत शुरुआत 2 नवंबर, 1911 से आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी की ओर से संपादित 'सरस्वती' पत्रिका से हुई। द्विवेदी जी और 'सरस्वती' के सानिध्य में उन्हें अपने साहित्यिक और सांस्कृतिक संस्कारों को विकसित करने का अवसर मिला तो मदनमोहन मालवीय के अखबार 'अभ्युदय' के जरिए उन्होंने अपने राजनीतिक विचारों को आकार दिया। अन्ततः कानपुर में 9 नवंबर, 1913 को 'प्रताप' की नींव पड़ी। इस महायज्ञ में विद्यार्थी जी के संग-संग शिव नारायण मिश्र, नारायण प्रसाद अरोड़ा और यशोदा नंदन भी शामिल हुए।

हिंदी पत्रकारिता के प्रति विद्यार्थी जी का संकल्प, सेवा और समर्पण बेमिसाल रहा है। सत्याग्रह, जुलूस और सभाओं से लेकर दलीय चुनावी राजनीति में नेतृत्व संभाला, पर अपनी पत्रकारिता को दलीय राजनीति का मोहरा कभी नहीं बनने दिया। उन्होंने ब्रिटिश सरकार से डटकर लोहा लिया। लेखनी के माध्यम से जनजागरण का उद्घोष किया। विद्यार्थी जी पत्रकारिता कर्म में सदा एक मोमबत्ती की मानिंद जलते रहे। जन आंदोलन को आगे बढ़ाने के पुरस्कार स्वरूप बार-बार कारावास तक भोगा। उन्होंने अपने जीवन में पांच जेल यात्राएं की। इनमें तीन पत्रकारिता और दो राजनीतिक भाषणों के चलते हुईं। पत्रकारिता में समाज के हित के लिए कार्य किए। एक आलेख में उन्होंने विस्तारपूर्वक अन्य देशों की शराबबंदी की सूचना दी है। एक भारतीय पत्रकार

के लिए यह विचार का विषय इसलिए भी था कि उन दिनों भी भारत अन्न की समस्या से जूझ रहा था। 10 मई, 1915 को उन्होंने लिखा, "सुरापान के बहिष्कार ने रूसियों को बहुत लाभ पहुँचाया और इस लाभ को देखकर रूस के मित्र फ्रांस और इंग्लैंड ने भी इस मैदान में आगे क़दम बढ़ाया है। फ्रांस के होटलों में शराब की बोतलों का प्रवेश बंद हो गया, और इंग्लैंड में सम्राट जॉर्ज के आगे बढ़ने पर सर्व-साधारण में शराब के विरुद्ध उत्तेजना फैल गई है, और अब वहाँ शराब पर टैक्स बढ़ाने की योजना हो रही थी। शराव की रोकथाम में फ्रांस और इंग्लैंड में उतनी सफलता नहीं हुई, जितनी रूस में। इसका यहीं कारण हो सकता है कि रूस में प्रजा के अधिकार उतने नहीं जितने इंग्लैंड और फ्रांस में, और इसलिए वहाँ राजा के एक ही इशारे से वह काम हो गया।"[2] सुरापान के बहाने उन्होंने भारतीय इतिहास की जय-पराजय को भी याद किया है। 21वीं शताब्दी में भी भारत के कुछ प्रांतों ने इसे बंद करने की ओर ध्यान दिया। पूरा भारत अभी भी शराबबंदी पर सहमत नहीं है। पत्रकारिता के जरिए वह किसके साथ खड़े होंगे, इसका भी बाकायदा उल्लेख किया- इस यात्रा में माखनलाल चतुर्वेदी, बालकृष्ण शर्मा 'नवीन', कृष्णदत्त पालीवाल, श्रीराम शर्मा, देवव्रत शास्त्री, सुरेश चंद्र भट्टाचार्य और युगल किशोर सिंह शास्त्री जैसे ख्यातिलब्ध सरीखे पत्रकार विद्यार्थी जी के सहयोगी रहे हैं।

साप्ताहिक की तरह दैनिक 'प्रताप' भी राष्ट्रवादी था। अत्याचारी शासकों का घोर विरोधी था। उसकी यही नीति उसका सबसे बड़ा 'अपराध' थी। इसका खामियाजा उसे भुगतना पड़ा। सरकार के अलावा देसी रियासतों ने भी उस पर शिकंजा कसने का प्रयास किया। सात-आठ रियासतों ने अपने राज्य में 'प्रताप' का जाना बंद कर दिया। महात्मा गांधी की ओर से संचालित असहयोग आंदोलन के पक्ष में अपनी आहुति देने के बाद दैनिक 'प्रताप' का प्रकाशन 6 जुलाई, 1921 को बंद हो गया लेकिन साप्ताहिक 'प्रताप' अपनी क्रांतिकारिता एवं स्पष्ट राजनीतिक विचारों के कारण उत्तर भारत का प्रमुख पत्र बन गया था। जमानत, चेतावनी और सरकारी धमकियों का वार उस पर होता रहता था। विद्यार्थी जी इस बात पर भी निगाह रखते थे कि 'प्रताप' का दुरुपयोग उनके अनावश्यक प्रचार के लिए न होने पाए। उनके अधिकांश लेख भी वास्तविक नाम के बजाए हरि, दिवाकर, गजेंद्र, लंबोदर, वक्रतुंड, श्रीकांत, एक भारतीय युवक आदि कल्पित नामों से प्रकाशित होते थे। उनका मानना था कि पत्र या पत्रिका के पूरे अंक में संपादक के नाम का उल्लेख एक बार से अधिक नहीं होना चाहिए। गणेश शंकर विद्यार्थी राजनीति में गांधी जी से प्रभावित थे तो दूसरी ओर क्रांतिकारियों के बेहद निकट थे। महात्मा गांधी के अहिंसक नेतृत्व और भगत सिंह के क्रांतिकारी विचारों के बीच खड़े विद्यार्थी जी ने 'युवकों का विद्रोह' नामक लेख भी लिखा। क्रांतिकारियों से उनके कैसे ताल्लुकात थे, इसकी मिसाल रामप्रसाद बिस्मिल की आत्मकथा का प्रकाशन है। बिस्मिल ने फांसी से तीन दिन पहले जेल में आत्मकथा लिखी थी, जिसे विद्यार्थी जी ने 'प्रताप' प्रेस से छापा था।

विद्यार्थी जी हर तरह की सांप्रदायिकता के विरोधी थे। विद्यार्थी जी अपनी अंतिम जेल यात्रा से 9 मार्च, 1931 को लौटे थे, उस समय देश सांप्रदायिक आग में झुलस रहा था। कानपुर में 'हिंदू-मुस्लिम दंगा' हो गया। ऐसी स्थिति में कानपुर में रहना उचित समझा। उन्होंने देखा कि ब्रिटिश सरकार इस भयावह स्थिति में पूरी

तरह मौन है। इसे देखते हुए वह सांप्रदायिकता की आग बुझाने के लिए मैदान में कूद पड़े। इसी बीच 23 मार्च, 1931 को लाहौर सेन्ट्रल जेल में फांसी दे दी गई थी। फांसी देने का समाचार सुनकर देश भर में जबर्दस्त आक्रोश फैल गया। हिंदू-मुस्लिम दंगों के दौरान हिंसक भीड़ ने 25 मार्च, 1931 को विद्यार्थी जी की हत्या कर दी। 'हिंदी नवजीवन' ने 9 अप्रैल, 1931 को लिखा, "गणेश शंकर विद्यार्थी की मृत्यु हम सबकी स्पर्धा के योग्य थी। उनका रक्त वह सीमेंट है, जो अंततोगत्वा दोनों जातियों को जोड़ेगा। कोई पैक्ट या समझौता हमारे दिलों को नहीं जोड़ेगा; पर जैसी वीरता गणेश शंकर विद्यार्थी ने बताई है, आखिरकार वह अवश्य ही पाषाण-से-पाषाण हृदयों को पिघलावेगी, और पिघलाकर एक करेगी। पर यह जहर, किसी तरह क्यों न हो, इतना फैल गया है, कि गणेश विद्यार्थी के समान महान, आत्मत्यागी और नितांत वीर पुरुष का रक्त भी, आज तो इसे धो बहाने के लिए शायद काफ़ी न हो। अगर भविष्य में ऐसा मौक़ा फिर आवे तो इस भव्य बलिदान से हम वैसा ही प्रयत्न करने की प्रेरणा प्राप्त करें। मैं उनकी दुःखिनी विधवा और उनके बच्चों के साथ अपनी आंतरिक संवेदना प्रकट नहीं करता, पर गणेश शंकर विद्यार्थी की योग्य पत्नी और संतान के नाते उन्हें बधाई देता हूँ। वह मरे नहीं हैं। आज वह तब से कहीं अधिक सच्चे रूप में जी रहे हैं, जब हम उन्हें भौतिक शरीर में जीवित देखते थे और पहचानते न थे।"[3]

गणेश शंकर विद्यार्थी ने सुरापान को अन्न और धन की हानि के साथ जोड़कर देखा। शराब को वे शरीर, पुरुषार्थ और चरित्र के साथ भी जोड़ते थे। यह किसी भी दृष्टि से लाभदायक नहीं है। आज भी भारत जैसे देश में ग़रीबी और भुखमरी की चर्चा करने वाले लोग शराबबंदी के विरोध में लेख नहीं लिखते। शराब बनाने में कितने अन्न का नुक़सान होता है और कितने करोड़ रुपए गल जाते हैं, यह 1915 में गणेश शंकर विद्यार्थी को मालूम था। आज के सचेत पत्रकारों को भी शायद ही मालूम हो। अख़बारों में तो इसके दुर्गुणों को लेकर संपादकीय तो प्रायः नहीं लिखे जाते हैं। बात सौ साल से अधिक पुरानी है। लेकिन आज भी उतनी ही प्रासंगिक। इंग्लैंड के पाँच प्रसिद्ध डॉक्टरों के संदर्भ में शराबबंदी के लिए लिखी गई ये पंक्तियाँ सबके ध्यान में आ जाए, इसलिए इसे उधृत करना आवश्यक है। उन्होंने लिखा, "सुरा का गुणगान धोखे की टट्टी है, सुरा से लाभ नहीं, हानि है। हानि अन्न की, और धन की, हानि शरीर की और पुरुषार्थ की। शराब खाद्य पदार्थों को सड़ा कर बनाई जाती है। इस सड़ी चीज़ के बनाने में प्रत्येक वर्ष इंग्लैंड चार करोड़ मन अन्न, शक्कर आदि नष्ट करता है। ऐसे समय में जबकि अन्न के लिए इंग्लैंड दूसरों का मुँह ताक रहा है, अन्न का यह नाश कैसी मूर्खता का काम होता है। इंग्लैंड हर साल सुरा देवी को अपने 2 अरब 40 करोड़ रुपए की भेंट देता है। और इस खर्च का शरीर पर क्या फल होता है, वह स्वर्गीय लार्डे राबर्ट्स, फील्ड मार्शल, वोत्सले, और इंग्लैंड के पाँच नामी डॉक्टरों के इन शब्दों में प्रकट होता है, 'सुरापान से सिपाही की संकेतों के देखने की शक्ति कम हो जाती है, उसकी तत्परता जाती रहती है, वह ठीक निशाना नहीं लगा सकता, वह जल्दी थक जाता है, उसकी सहनशीलता लोप हो जाती है और पीड़ाएँ उसे अधिक कष्ट देने लगती हैं।"[4]

गणेश शंकर विद्यार्थी न सिर्फ महान स्वातंत्र्यवीर थे, वरन लेखन और राष्ट्र-सेवा में जिस ईमानदारी, त्याग और बलिदान की आवश्यकता होती है, वे उसकी मिसाल थे। अंग्रेज अधिकारियों एवं देशी नरेशों की निरंकुशता, शोषण एवं दमनकारी नीतियों के विरुद्ध उनकी लेखनी ने अद्वितीय जनजागरण का कार्य किया था। निर्धनों, किसानों व मजदूरों की समस्याओं को उजागर करने तथा सामाजिक जड़ताओं, अंध-परंपराओं एवं कुरीतियों के विरुद्ध सामाजिक जागृति का उद्देश्य लिये पत्रकार गणेश शंकर विद्यार्थी का लेखन अपने आप में ही महान है। साहित्य के माध्यम से राष्ट्रीयता की अलख जगाना वे बखूबी जानते थे। अहर्निश राष्ट्र-सेवा को समर्पित एक ऐसा व्यक्ति, जो स्वातंत्र्य समर, समाज-सेवा, सामाजिक, राजनीतिक संगठन और पत्रकारिता में एक साथ सक्रिय रहा हो उन सबके साथ, जिसने कोर्ट-कचहरी और जेल-जीवन का भी सहर्ष वरण किया हो, यह विलक्षण प्रतिभा, अदम्य साहस और अटूट लगन को ही दर्शाता है।

विद्यार्थी जी की प्रारंभिक शिक्षा विदिशा एवं साँची के सांस्कृतिक वातावरण में हुई। आगे की शिक्षा उन्होंने कानपुर और प्रयागराज में प्राप्त की। प्रयागराज प्रवास उनके जीवन का एक ऐसा मोड़ था, जो उनके व्यक्तित्व की निर्मिति का आधार बना। 'कर्मयोगी' के संपादक पं. सुंदरलाल जी पत्रकारिता के क्षेत्र में उनके प्रारंभिक गुरु बने। 'स्वराज्य' में भी विद्यार्थी जी की टिप्पणियां प्रकाशित होती थीं, जो उन दिनों क्रांतिकारी विचारों का संवाहक था। उन्हीं दिनों 'सरस्वती' के यशस्वी संपादक आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी को एक युवा और उत्साही सहयोगी की आवश्यकता थी, अतः 2 नवंबर, 1911 को वे उनके सहायक संपादक नियुक्त हुए। यह विशुद्ध साहित्यिक पत्रिका थी, जबकि विद्यार्थी जी पत्रकारिता के माध्यम से स्वातंत्र्य समर में भी योगदान करना चाहते थे, अतः दिसंबर 1912 में वे पं. मदनमोहन मालवीय के पत्र 'अभ्युदय' से जुड़ गए। यहां भी उनका मन नहीं लगा, तब उन्होंने कानपुर से हिंदी साप्ताहिक 'प्रताप' का प्रकाशन (9 नवंबर, 1913) प्रारंभ किया।

'प्रताप' को अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। कई बार अंग्रेज सरकार द्वारा छापेमारी की गई। प्रताप प्रेस द्वारा प्रकाशित लक्ष्मण सिंह के नाटक 'कुली प्रथा', नानक सिंह 'हमदम' की क्रांतिकारी कविता 'सौदा-ए-वतन' जैसी रचनाएं जब्त की गईं। उन पर राजद्रोह की कार्यवाही हुई, हजारों रुपए का जुरमाना व जेल की सजा मिली। बावजूद इसके विद्यार्थी जी विचलित नहीं हुए। 'प्रताप' ऐसा पत्र था, जिसमें समाज के हर वर्ग के दुःख और उनकी तकलीफों को वाणी मिलती थी। संघर्ष करने की ताकत और अन्यायी, अत्याचारी का सशक्त प्रतिकार करने की सामर्थ्य भी। विद्यार्थी जी ने 1916 से 1919 के दौरान कानपुर में लगभग 25 हजार मजदूरों के संगठन 'मजदूर सभा' का नेतृत्व किया तथा उनके पत्र 'मजदूर' के प्रकाशन में सहयोग भी। इसी प्रकार अवध के किसान आंदोलन को उन्होंने 'प्रताप' में इतनी प्रमुखता से प्रकाशित किया कि उसकी आंच इंग्लैंड तक पहुंची, जिसके कारण वहाँ की सरकार ने लंदन स्थित भारतीय सचिवालय के माध्यम से तत्कालीन वायसराय से रिपोर्ट मांगी। यहां पर यह तथ्य भी उल्लेखनीय है कि चंपारण में नील की खेती करने को विवश पीड़ित, प्रताड़ित किसानों के प्रतिनिधि राजकुमार शुक्ल की भेंट गांधी जी से विद्यार्थी जी ने ही कराई थी,

फलस्वरूप चंपारण आंदोलन अस्तित्व में आया, जिसके माध्यम से भारत में सर्वप्रथम गांधीजी के नायकत्व ने उभार पाया. 'प्रताप' के अनेक विशोषांक भी आजादी की लड़ाई के संवाहक बने, जिसमें 'राष्ट्रीय अंक' और 'स्वराज्य अंक' विशेष चर्चित रहे।

भारतीयों के चरित्र में आई गिरावट से वे दुखी थे। इसे वे भारत की अवनति का बड़ा कारण मानते थे। वे ये सोचकर दुखी होते थे कि जिसे समस्त संसार का गुरु होने का सौभाग्य प्राप्त था, जिस देश के राजा चक्रवर्ती कहलाते थे, उस देश के लोग अपने घर में परतंत्र हैं। आज भारत की आबादी को एक समय की सूखी रोटी भी नहीं मिलती। जो देश कभी असभ्य गिने जाते थे वे उन्नत हो गए और भारत 19वीं शताब्दी के पहले ही संसार का सबसे अधिक निर्धन देश बन गया। उन्होंने याद किया है अपने गौरव को। वे गौरव को बार-बार याद दिलाने से अच्छे कर्तव्य-पथ पर आगे बढ़कर कुछ बेहतर करने को महत्व देते थे। अपनी पीड़ा को विजयदशमी के दिन यह कहते हुए व्यक्त किया था कि लोग कहेंगे कि विजय की गाथा के स्थान पर पराजय का रोना रो रहा है। उन्होंने लिखा "वह देश जिसे वैद्यक, गणित, भूगोल तथा ज्योतिष-जैसी विद्याओं को जन्म देने और उपनिषद् रचने का अभिमान था, आज अज्ञान के अंधकार में इतना लिपटा हुआ है कि संसार के किसी भी देश में अशिक्षितों की संख्या इतनी अधिक नहीं मिलती, जितनी भारत में। लक्ष्मी आज लगभग एक शताब्दी से हमारा साथ छोड़ ही चुकी, किंतु सरस्वती भी हमें इतनी घृणा की दृष्टि से देखती है कि आज सौ पीछे 94 भारतवासी ऐसे हैं जिन्हें संसार की किसी एक भाषा में अपना नाम तक लिखना नहीं आता। जिस देश ने किसी समय राम जैसे वीर, कपिल जैसे मस्तिष्क धारी तथा बुद्ध जैसे आचार्य उत्पन्न किए वह आज कायरता, अज्ञानता तथा अनेक प्रकार के असंख्य मूढ़ विश्वासों का घर बना हुआ है।"[5]

निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि गणेश शंकर विद्यार्थी हिंदी पत्रकारिता के आधार स्तंभ हैं। उन्होंने हिंदी पत्रकारिता के कई मानक स्थापित किए हैं। वे भारतीय जनमानस की आवाज अपनी पत्रकारिता के माध्यम से आजीवन उठाते रहे। उन जैसा व्यक्तित्व विरले ही आते हैं। 'प्रताप' समाचार पत्र का कार्यालय राष्ट्रवादियों और क्रांतिकारियों के साथ साहित्यकारों का भी केंद्र था। रामप्रसाद 'बिस्मिल', अशफाकउल्लाह खान, ठाकुर रोशन सिंह, चंद्रशेखर आजाद, बटुकेश्वर दत्त, शिव वर्मा तथा छैल बिहारी दीक्षित 'कंटक' आदि का उन्होंने समय- समय पर सहयोग और मार्गदर्शन किया। सरदार भगत सिंह अपनी फरारी के दिनों में वेश बदलकर 'प्रताप' कार्यालय में रहे तथा बलवंत सिंह छद्दा नाम से उन्होंने वहां कार्य किया एवं लेख लिखे। श्यामलाल गुप्त 'पार्षद' से झंडा गीत की रचना कराने में विद्यार्थी जी का बहुत बड़ा योगदान है। स्वाधीनता और राष्ट्र की नवनिर्मिति के लिए उनका लेखनीय योगदान अत्यंत महत्वपूर्ण है, जिसकी चर्चा सामान्यतः कम होती है। उनका संस्मरण 'जेल- जीवन की झलक' आज के प्रत्येक विद्यार्थी को अवश्य पढ़ना चाहिए, ताकि वे समझ सकें कि हमारी आजादी कितने कष्टों और बलिदानों का प्रतिफल है। विद्यार्थी जी को भारतीय पत्रकारिता का कीर्ति पुरुष कहा जाता है। उन्होंने 'गजेन्द्र', 'भारतीय' 'युवक', 'हरि', 'दिवाकर', 'वक्रतुण्ड', 'कलाधर',

'लम्बोदर' और 'वन्देमातरम' आदि छद्म नामों से अनेक मौलिक और तेजस्वी रचनाएँ लिखीं, जो आज भी हम में ताजगी और शक्ति भरने में समर्थ हैं।

संदर्भ सूची

1. संवाद पथ पत्रिका, प्रधान संपादक प्रो. नन्द किशोर पाण्डेय, केंद्रीय हिंदी संस्थान, दिल्ली केंद्र, जुलाई-सितंबर, 2019, खंड-2 अंक-2, पृ. 05
2. वही, संवाद पथ पत्रिका, प्रधान संपादक प्रो. नन्द किशोर पाण्डेय, जुलाई-सितंबर, 2019, खंड-2 अंक-2, पृ. 06
3. वही, संवाद पथ पत्रिका, प्रधान संपादक प्रो. नन्द किशोर पाण्डेय, जुलाई-सितंबर, 2019, खंड-2 अंक-2, पृ. 06
4. वही, संवाद पथ पत्रिका, प्रधान संपादक प्रो. नन्द किशोर पाण्डेय, जुलाई-सितंबर, 2019, खंड-2 अंक-2, पृ. 07
5. वही, संवाद पथ पत्रिका, प्रधान संपादक प्रो. नन्द किशोर पाण्डेय, जुलाई-सितंबर, 2019, खंड-2 अंक-2, पृ. 11-12